Impact Factor : 8.0 (IIFS Indexing) ISSN : 2250-1193

Anukriti

An International PEER REVIEWED Multidisciplinary Refereed Research Journal

Vol. 16, No. 4 Year 16 April, 2026

Recognized Research Magazine as per UGC and International Standards

Editor in Chief

Prof. Vidya Shanker Singh

Retired

Dept. of Hindi, Motilal Nehru College (Eve.),

University of Delhi, New Delhi

Editor

Dr. Ramsudhar Singh

Ex Head, Department of Hindi

Udai Pratap Autonomous College

Varanasi

Published by

SRIJAN SAMITI PUBLICATION

VARANASI (U.P.), INDIA

Mob. 9415388337, E-mail : anukriti193@rediffmail.com, Website : anukritijournals.com

Scanned with OKEN Scanner

PEER REVIEWED EDITORIAL BOARD

Prof. Noorjahan Begum : Ex Head, Hindi Department, Hyderabad University, Hyderabad

Prof. Neelam Sarraf : Hindi Department, Jammu University, Jammu

Prof. Banshidhar Lal : Ex Head, Hindi Department, Magadh University, Bodhgaya (Bihar)

Dr. Manju Elangbam : Manipur University of Culture, Palace Compound, Imphal-East, Manipur

Dr. Nawab Akram - Associate Professor, Magadh Professional Institute, Digha, Nahar Road, Danapur, Patna

Vinod Kumar Chhari - Assistant Professor (Political Science), Govt. Girls College, Chachoda, Distt.-Guna (M.P.)

ADVISOR BOARD

Dr. Manoj Kumar Sharma - Principal, Veena Memorial College of Education, Karauli & Research Supervisor, University of Kota, Kota, Rajasthan

Dr. Seema Kumari - Assistant Professor, Political Science, Rohtas Mahila College, Sasaram, Rohtas, Veer Kunwar Singh University, Ara, Bihar

Dr. Sarita Tiwari : Political Department, Kendriya University, Motihari, G.S. College, Jamshedpur

Prof. R. Sita Ram : Hindi Department, Durban University, South Africa

Prof. Arif Nazir : Hindi Department, Aligadh Muslim University, Aligarh

Prof. R.K. Shah : Department of Economics, Tribhuvan University, Nepalgunj, Nepal

Dr. N.C. Yadav : Principal, Rajkiya College, Dubrala, Gunnaur, Badayu

Ms. Tabassum : Amar Ujala 'Dainik', Varanasi

MANAGING DIRECTOR

Mushtaque Ahmad

© Publisher

ISSN : 2250-1193

Office :

H.No. 498, South Kakarmatta, Post-B.L.W., Distt.-Varanasi-221004 (U.P.), India

Mob. 9415388337, Email : anukriti193@rediffmail.com

Website : anukritijournals.com

Note :

- The views expressed in the journal **"Anukriti"** are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings.
- All disputes are subject to Varanasi

Scanned with OKEN Scanner

अनुक्रमणिका

१	ऋग्वेदकालीन समाज में वर्ण व्यवस्था का स्वरूप **डॉ0 प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी**	1-3
२	मानवतावादी दर्शन सामाजिक सन्दर्भ में **डॉ0 ज्ञान प्रकाश द्विवेदी**	4-6
३	अहिंसा की शिक्षा : गाँधी जी के प्रयोग **डॉ0 विनोद कुमार**	7-8

Scanned with OKEN Scanner

Anukriti (An International Peer Reviewed Multidisciplinary Refereed Research Journal) Impact Factor : 8.0
Vol. 16, No. 4, April 2026 ISSN : 2250-1193

ऋग्वेदकालीन समाज में वर्ण व्यवस्था का स्वरूप

डॉ0 प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी
प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, डी0बी0एस0 कॉलेज, कानपुर

भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था का आदिकाल से ही महत्त्व रहा है। वर्ण आश्रम व्यवस्था को इतना सुन्दर सुदृढ़ एवं कठोर बना दिया कि मानव समाज की तो बात अलग रही देवताओं में भी वर्ण विभाजन हो गया। अग्नि एवं बृहस्पति को ब्राह्मण इन्द्र वरुण तथा यम को क्षत्रिय वसु, रुद्र तथा विश्वेदेव को वैश्य तथा मरुत और पूषा की गणना शूद्र वर्ण में की गयी है।

इस चातुर्वर्ण्य विभाजन के महत्त्व को गीता एवं उपनिषदों में भी दर्शाया गया है। गीता में भगवान कृष्ण ने अपने श्रीमुख से स्वयं ही उद्घोषित किया है कि उन्होंने जगत की रचना के साथ चारों वर्णों की सृष्टि गुण और कर्मों के अनुसार की–

"चातुर्वर्ण्य मया सृष्टम गुण कर्म विभागशः।"[1]

वैदिक वर्ण व्यवस्था में वर्णों में परस्पर स्नेह सहयोग था जिस प्रकार से शरीर में भिन्न–भिन्न अंग हैं किन्तु सब मिलकर पुरुष कहलाता है। इसी तरह मनुष्य जाति में भिन्न–भिन्न प्रकार के वर्ण होते हुए भी यह मनुष्य समाज एक है। जैसे एक भी इन्द्रिय के नष्ट हो जाने से सारे शरीर की दशा में अन्तर आना आरम्भ हो जाता है उसी प्रकार किसी भी वर्ण में निर्बलता आ जाने से संसार की व्यवस्था ही नष्टप्राय हो जाती है। यह वर्ण व्यवस्था जटिल न होकर इसमें लचीलापन था एक वर्ण का दूसरे वर्ण में परिवर्तन संभव था। आपस में विद्वेष भाव नहीं था, सभी वर्ण सम्मानीय एवं आदरणीय थे, इसी कारण तो वेद ने मानव में समाजवाद की व्याप्ति बताने के लिए मानव को अपने शरीर में अंग रूप में प्रतिपादित किया। यह वर्ण विभाजन उच्चता नीचता की दृष्टि से न होकर व्यक्ति के गुण कर्मों के अनुसार माना गया है। चारों वर्ण आपस में सामंजस्य युक्त थे। चारो वर्ण एक मन होकर कर्तव्य का पालन करते थे। यही समाज का आदर्श रूप भारत के परवर्ती विचारकों के समक्ष भी रहा है।

भारतीय समाज का प्रथम स्वरूप वैदिक साहित्य में मिलता है। समाज संगठन की अद्भुत योग्यता की ओर प्रवृत्ति थी। सामाजिक एकता का दार्शनिक आधार ब्रह्म था और ब्रह्म से ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि सबका उद्भव होता है। ऋग्वेद में जो वर्ण व्यवस्था का मंत्र आया है इसमें उपमा रूप में पहले टुकड़े को ब्राह्मण कहा क्योंकि ब्राह्मण मनुष्य जाति का सिर है। सिर वाला भाग नीचे के भागों से तत्व शक्ति में बहुत निर्बल है क्योंकि वह सबसे छोटा है, जिस प्रकार से यह हिस्सा दूसरा हिस्सा से तत्व शक्ति में निर्बल है, उसी प्रकार से ब्राह्मण सांसारिक वस्तुओं और धनादि की दृष्टि से अन्य वर्णों की अपेक्षा निर्बल है। ब्राह्मण के कर्म गुण, ज्ञान और वैराग्य हैं। पाँचों ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान प्राप्त और संसार में उसका उपदेश करे, ईश्वर पर विश्वास करे और सदा सत्य बोले, यही उसके आवश्यक कर्तव्य बताये गये हैं। ऋग्वेद में ब्राह्मण को यज्ञ करना कराना, अध्ययन करना आदि कर्मों का वर्णन है–

'आ यातं मित्रावरुणा जुषाणावाहुतिं नरा।
पतं सोममृतावृधा।।[2]

अर्थात् परमात्मा आज्ञा देते हैं कि हे ज्ञानादि यज्ञों के अनुष्ठानी विद्वान ब्राह्मणों तुम सत्कारपूर्वक अपने यजमानों को प्राप्त होओ और सोमपान करते हुए उनके हृदय को शान्ति धाम बनाओ अर्थात् अपने अनुष्ठान रूप ज्ञान से उनके रूपयज्ञ, योगयज्ञ तथा कर्मयज्ञादि वैदिक कर्मों का अनुष्ठानी बनकर पवित्र करो और शान्ति की आहुति देते हुए संसार भर में शान्ति फैलाओ जो तुम्हारा कर्तव्य है।

आगे चलकर मनु महाराज ने भी ब्राह्मण के कर्म निहित कर दिए, जैसा कि गीता में कहा गया है–

अन्तकाले च मामेव समरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मदभावंश्याति नास्त्यत्र संशयः।।[3]

बल का स्थान विद्या के पश्चात् दूसरा है क्योंकि बाहु इत्यादि आँख की मदद के बिना कुछ नहीं कर सकता है और आँख की रक्षा के वास्ते बाहु का होना अत्यावश्यक है। भुजायें शक्ति का प्रतीक हैं। क्षत्रिय का प्रमुख कार्य राज्य की शासन व्यवस्था तथा उसकी सुरक्षा व्यवस्था को सम्पन्न करना था। इसी वर्ग के प्रायः सैनिक होते थे। तीर धनुष इस वर्ग का जातीय चिन्ह मानो आभूषण था। ऋग्वेद में क्षत्रिय को ही राजा कहा गया है और उसके ये गुण बताये गये हैं।

Scanned with OKEN Scanner

अनेक स्थानों पर राजा के गुण तथा उनके समाज के प्रति कर्तव्य होने चाहिए। ऋग्वेद में वर्णन मिलता है–

मनीषामन्तरिक्षस्य नृभ्या सुचेव घृतं जुह्वाम वहिमना।
तरणित्वा ये पितुरस्य सश्चिर ऋभवोवाजमस्हन्दिवो रजः।।

अर्थात् जैसे ये सूर्य की किरणें लोक लोकान्तरों को चढ़कर जल वर्षा और उससे औषधियों को उत्पन्न कर सब प्राणियों को सुखी करती है, वैसे ही राजा आदि जन प्रजाओं को सुखी करें।

इस प्रकार से राजा अर्थात् क्षत्रिय का कर्तव्य था कि वह प्रजा में सुव्यवस्था बनाये रखे, उसका यहाँ तक ध्यान रखना होता था कि बलवान कहीं निर्बल को ग्रास न बना ले। इसके अतिरिक्त दान देना, यज्ञ करना, वेद पढ़ना, विलासिता से दूर रहना, शूरवीर होना, अतिथि सत्कार करना ये सब भी क्षत्रिय के कर्तव्य थे। मनु ने भी क्षत्रिय के कर्तव्य बताये हैं। इसी प्रकार भागवत् गीता में बताया गया है।

वैश्य को ऊरु जंघा का प्रतीक माना गया है जिस प्रकार जंघाये सारे शरीर को सहारा देना और हिलने से ही समस्त शरीर का रक्त संचार होता है, उसी प्रकार यह वैश्य भी सारे समाज का संचालक एवं जीवन रक्षक है। उसका प्रमुख कार्य गाय आदि पशुओं को पालना, खेती करना, व्यापार करना, वाणिज्य व्यवसाय से देश की उन्नति करना आदि है। ऋग्वेद में भी आया है

"त्वं नोअसि भारताग्ने शाभिरुक्षभिः अष्टापदीभिराहुतः"[4]

अर्थात् जो मनुष्य आठ स्थानों में उच्चारण की हुई वाणी से सत्य का उपदेश करता हुआ गवादि पशु की रक्षा से सबको पालने का विधान करता हे, वह सबको रखने योग्य है। आगे वैश्य के लिए कृषि कर्म नियत था। अतः यजुर्वेद कहता है–

"भूमिरावपनं महत" (अर्थात्) बोने का कृषि का महान स्थान भूमि है।[5] पशु भी धन माना गया है इसीलिए यजुर्वेद में कई स्थानों पर पशु सम्बन्धित चर्चा की है **"यजमानस्य पशून् पाहि"** यजमान के पशुओं की रक्षा पालन करो। **"उपहूताऽइव गावउपहूताऽजायवयः।"** अर्थात् हमारे घरों में गौ तथा बकरी, भेड़ आदि पशु बहुतायत से हो इस प्रकार अनेक स्थानों पर पशुओं के पालन का विधान है।

इस प्रकार वेद में वैश्य के लिए बताया गया है कि वह प्रत्येक प्रकार से देश समाज को आर्थिक रूप से सहायता करे और सदैव उद्योगशील बना रहे सभी (तीनों) वर्णों के भार को सहज रूप में धारण कर सके।

ऐताधियं कृणवामा सखायोऽप या मातां ऋणुत व्रजं गोः।
यया मनु र्विशिशिप्रं जिगाय यया वणिग्वङ्कुरापा पुरीषम्।।[6]

अर्थात् मनुष्यों को योग्य है कि परस्पर में मित्र होकर बुद्धि को बढ़ा औरों को मंत्र विशेष ज्ञान अच्छे प्रकार देवे जैसे वैश्य धन को प्राप्त होकर बढ़ता है वैसे उत्तम वृद्धि को पाकर बढ़े।

इस प्रकार से वेद में शूद्र के लिए जो पैर का प्रतीक बताया गया है जैसे पैर सारे शरीर का भार वहन करता है वैसे ही शूद्र भी समस्त त्रिवर्णों के प्रति उत्तरदायी होकर अपने कर्तव्यों का निर्वाह करता है। शूद्र को सेवा का अधिकार इसलिए दिया जाता था कि वह विद्या रहित होने से विज्ञान ज्ञान सम्बन्धी काम कुछ भी नहीं कर सकता, किन्तु शरीर से सब काम कर सकता है। मनु0 ने शूद्र के कर्तव्य को इस प्रकार बताया गया है। शूद्र को योग्य है कि निन्दा, ईर्ष्या अभिमान आदि दोषों को छोड़ के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा यथावत करना और उसी से अपना जीवन यापन करना यही एक शूद्र का कर्म गुण है। ऋग्वेद में मंत्र आता है–

वित्वक्षणः समृतौ चक्रमासजोअसुन्वतो विषुणः सुन्वतो वृधः।
इन्द्रो विश्वस्य दमिता विभीषणों यथावशं नयति दासमार्य्यः।।[7]

अर्थात् जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आर्यों तथा उत्तम गुण कर्म और स्वभाव वालों का शूद्र सेवक होता है वैसे ही उत्तम गुण कर्म से युक्त राजा की प्रजा सेवन करने वाली होती है। संक्षेप में यह ऋग्वेद में निरूपित वर्ण व्यवस्था के बारे में अभिव्यक्ति हुई वर्ण व्यवस्था जिसमें चार वर्ण आते हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। परन्तु ऋ0 के सातवें मण्डल में मंत्र आया है।

आ पश्चातान्नासत्या परस्तादाश्विना यातमधरा दुदक्ताद्।
आविश्वतः पांन्चजन्येन रायायूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

अर्थात् हे सत्यवादी विद्वानों! तुम लोग भले प्रकार पश्चिम से पूर्व दिशा से नीचे की ओर से ऊपर की ओर से सब ओर से पाँचों प्रकार के मनुष्यों का ऐश्वर्य बढ़ाओ और परमात्मा से प्रार्थना करो कि आप सदा मंगलरूपवाणियों द्वारा हमारे ऐश्वर्य की रक्षा करो।

Scanned with OKEN Scanner

अर्थात् वैदिक सिद्धान्तानुसार पाँच प्रकार के मनुष्यों का वर्णन करता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र और पाँचवें दस्यु जिनको निषाद भी कहते हैं वास्तव में वर्ण चार ही हैं, परन्तु मनुष्य मात्र का कल्याण अभिप्रेत होने के कारण पाँचवें दस्युओं को भी सम्मिलित करके परमात्मा उपदेश करते हैं कि सत्यवादी विद्वानों! आप लोग सब ओर से मनुष्यमात्र को प्राप्त होकर वैदिक धर्म का उपदेश करो, जिससे सब प्रजाजन सुकर्मों में प्रवृत्त होकर ऐश्वर्यशाली हो।[8]

इसी प्रकार से ऋ0 में कई स्थलों पर पंच शब्द आया है जो कि प्रायः समस्त मानव जाति के कल्याणार्थ प्रयुक्त होता हुआ प्रतीत होता है। हम देखते हैं कि ऋग्वेद में हमें वर्ण व्यवस्था का आपस में घनिष्ठता का जो सटीक वर्णन प्राप्त होता है, अन्यत्र नहीं। वैदिक युग का सामाजिक जीवन पारस्परिक समता एवं व्यक्ति स्वातंत्र्य में विश्वास रखता हैं यही कारण है कि वैदिक संहिताओं में कहीं भी मानव–मानव का विरोध नहीं दिखाई देता। ऋग्वेद कहता है

"मा नो रक्ष आ वेशीदाघृणी' वसो मा यातुर्मायातु मावताम।
परोगव्यत्यनिरामप क्षुधमग्नेसेध रक्षस्विनः।।"

अर्थात् जगत में ऐसा न्याय तथा शिक्षा फैलायें कि मानव परस्पर द्वेष द्रोह करना छोड़ मित्र बनकर रहे तभी वे सुखी हो ईश्वर की भी उपासना कर सकते हैं।[9]

मानव संस्कृति की स्थायी उदात्तता उसको वैदिक आदर्शों से ही प्राप्त हुई है। चारो वर्ण आपस में सुसंगठित थे। इसी पारस्परिक घनिष्ठता के कारण कभी–कभी योग्यता और प्रतिभा की सर्वमान्यता के साथ–साथ ब्राह्मण क्षत्रिय में परस्पर विवाह की सर्वमान्यता के साथ सम्बन्ध भी हो जाया करते थे। इस प्रकार वेद ने मानव के वर्गीकृत प्रयत्नों में शरीर एवं उसके अभिन्न अंशों की स्थिति प्रतिपादित करके एक समाजवाद के निर्माण का उपदेश दिया है।

वैदिक भारत का यह वर्ग विभाजन जब श्रम विभाज्य की दृष्टि से कर्तव्यनिष्ठ बना रहा तब तक तो वह राष्ट्र की उन्नति में निरन्तर सहायक बना रहा किन्तु जब वह अधिकार लिप्त एवं शोषक बन कर समाज की उपेक्षा करने लगा तो उसका विघटन एवं पतन होता चला गया और यह वर्ण व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर न रही अपितु जन्म के आधार पर इस वर्ण व्यवस्था का विकास होता चला गया, परिणामस्वरूप अत्यन्त भयावह स्थिति फैल गयी और आज यहाँ स्वतन्त्र आकाश के नीचे सांस लेना भी दूभर हो गया है। इस प्रकार लचीली परिवर्तनशील वैदिक वर्ण व्यवस्था ने अपरिवर्तनीय जाति प्रथा का रूप ले लिया।

इस प्रकार वैदिक भारत की सामाजिक व्यवस्था में चारों वर्णों के अलग–अलग कर्तव्य निश्चित थे उन पर आरूढ़ रहकर चारो वर्ण राष्ट्र के उत्तरोत्तर उत्थान में संलग्न थे। उनमें कोई वैर विरोध न था अपितु वे एक दूसरे के पूरक एवं सहायक थे। समाज के चारो वर्ण सुखी सम्पन्न तथा स्वावलम्बी थे। राष्ट्रीय गौरव की अभिवृद्धि करना ही उनका लक्ष्य तथा ध्येय था।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सभी वर्णों का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र की उन्नति में योग देना था यह समष्टि रूप राष्ट्र ही समस्त देशवासियों की सेवा का एकमात्र आधार था। ऋग्वेद में अच्छे व्यवहार का वर्णन मिलता है तथा अनेकों ऋग्वेद में मंत्र हैं जो मानवों को शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करने वाले हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. ऋ0 10/62/20
2. मानसिक शक्ति – स्वामी शिवानन्द
3. गीता 8–5
4. ऋ0 5/81/1, यजु0 5/14, 11/2, 37/2
5. यजु0 34/1–6 यज्जाग्रतोदूरमुदैति0।
6. ऋ0 5/45/6
7. ऋ0 3/15/4
8. ऋ0 9/70/4, ऋ0 9/88/8–24
9. ऋ0 1/109/8

Scanned with OKEN Scanner